विरोध, विरोध के लिए नहीं, विकास के लिए

प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़,

पूर्व कुलपति सिंघानिया विश्वविद्यालय, राजस्थान

विरोध का अर्थ है टकराव, किन्तु ऐसा विरोध ध्वंसात्मक होता है। विरोध, विरोध के लिए नहीं बल्कि विकास के लिए होना चाहिए। जहां पर विरोध का अर्थ समीक्षा करना होता है वही सच्चा विरोध है। इसमें टकराव नहीं होता। मानव, मानव में मतभेद हो सकता है मनभेद नहीं होना चाहिए। मन में यदि किसी के प्रति राग–द्वेष, ईर्ष्या यदि रहती है तो सदैव नकारात्मक विचार ही आते है। ऐसी अवस्था में किसी व्यक्ति के अच्छे काम भी बुरे लगते है। किन्तु जहां पर विरोध रचनात्मक होता है वहां भूल–सुधार का अवसर मिलता है। प्रायः देखा यह जाता है कि राजनीतिक दलों में अच्छी बातों को लेकर भी विरोध प्रदर्शन किया जाता है। प्रजातन्त्रात्मक प्रणाली में बहुदलीय व्यवस्था होती है। प्रत्येक दल जनता का प्रतिनिधित्व करते है। जो प्रत्याशी जिस क्षेत्र से चुनकर आता है उसका यह कर्त्तव्य है कि जनता की आकांक्षाओं को संसद या विधानसभाओं में उठाये और उनकी भलाई के लिए कार्य करें। जो दल सत्तारूढ़ होता है उसका कार्य है कि विपक्षी दलों के साथ मिलकर जनता के कल्याण की योजना बनाई जाये। यदि विपक्षी दलों के द्वारा कोई रचनात्मक सुझाव दिया जाता है तो उसे भी स्वीकार करना चाहिए। विपक्षी दलों का भी यह उत्तरदायित्व है कि सरकार के अच्छे कार्यों की प्रशंसा करें और बुरे कार्यों का विरोध करके रचनात्मक सुझाव दें। सरकार विरोधियों के रचनात्मक सुझावों को स्वीकार करें और जनता के हित के लिए कार्य करें। ऐसी अवस्था में विरोध, विरोध नहीं रह जाता वह भी रचनात्मक दृष्टि से विकास के लिए होता है। प्रजातन्त्र में व्यक्ति का विरोध नहीं होना चाहिए, विचारों का विरोध होना चाहिए। विकास दो तरह के होते है– बाहरी और भीतरी। बाहरी विकास बाह्य संसार का विकास है और आंतरिक विकास इन्द्रिय जगत का विकास है। दोनों तरह का विकास रचनात्मक ढ़ंग से होना चाहिए। आन्तरिक सुख आध्यात्मिक सुख है। जहां पर आध्यात्मिक सुख की कल्पना होती है, फिर बाहरी सुख की कल्पना होती है वहां पर स्थायी विकास होता है। केवल भौतिक विकास किसी काम का नहीं। प्रकृति का विनाश करके यदि विकास किया जाता है तो वह विकास घातक

होता है। पंचेन्द्रिय प्राणियों में मनुष्य सबसे अधिक विकसित प्राणी है। विकास और ह्रास का सम्बन्ध मनुष्य से ही है। मनुष्य ने अपने भौतिक विकास के लिए अनेक उपकरणों का निर्माण कर लिया है। यदि ये उपकरण सही ढ़ंग से प्रयोग किये जाते है तो संसार का विकास होता है। किन्तु यदि इनका दुरुपयोग होता है तो सृष्टि के विनाश में एक सैकंड का ही समय लग सकता है। विरोध ध्वंसात्मक नहीं होना चाहिए। प्रियता और अप्रियता के आधार पर विरोध नहीं होना चाहिए। विरोध सरंचनात्मक होना चाहिए। प्राचीनकाल में समाज में अनेक बुराईयां व्याप्त थी। उन बुराईयों को दूर करने के लिए हमारे समाजसुधारकों ने बहुत प्रयास किया। उस समय की प्रचलित बुराईयों का विरोध किया। जब समाज सुधारकों ने बुराईयों को दूर करने का प्रयास किया तो उनका समाज में विरोध हुआ। किन्तु समाज सुधारकों में उस विरोध को नकारात्मक रूप से नहीं लिया, क्योंकि उनको यह पता था कि यह विरोध अज्ञानता के कारण हो रहा है। धीरे–धीरे यह विरोध समाप्त हो जायेगा। जब किसी नये कार्यक्रम का प्रारम्भ समाज में किया जाता है तो समाज में पहले उसका विरोध होता है। जब समाज के लोगों को उसकी सच्चाई का पता चल जाता है तो विरोध करने वाले ही उस कार्यक्रम का स्वागत करने लगते है। अगर उद्देश्य अच्छा रहता है तो सभी उसका स्वागत करते है। समाज का अगुवा जिस मार्ग को दिखलाता है तो उस मार्ग पर चलने वाले अनेक हो जाते है। गांधीजी ने जब सत्य और अहिंसा के मार्ग को दिखलाया तो क्रांतिकारियों को यह मार्ग ठीक नहीं लगा। उनको यह लग रहा था कि विदेशी शक्ति के सामने गांधीजी का यह दिखलाया गया मार्ग उचित नहीं प्रतीत हो रहा है। इसीलिए उन्होंने गांधीजी का विरोध किया। बाद में चलकर जब उनको अहिंसा और सत्य के मार्ग का ज्ञान हुआ तो उन्होंने भी दबे मन से गांधीजी का नेतृत्व स्वीकार कर लिया। गांधीजी यह चाहते थे कि स्वतन्त्रता की प्राप्ति रक्तपात से नहीं, बल्कि अहिंसात्क ढ़ंग से हो। गांधीजी का यह मार्ग देशहित में था। बहुत कम ही रक्तपात में भारत को स्वतन्त्रता प्राप्त हो गई। बुराई पर अच्छाई की विजय अहिंसा के द्वारा ही हो सकती है। आजतक हम उनके दिखाये हुए मार्ग पर चल रहे है। अहिंसा भारतीय संस्कृति का मूलमंत्र है। भारतवर्ष में कोई भी कार्य हो उसके मूल में अहिंसा की भावना अवश्य रहती है। अहिंसा को यदि हम व्यावहारिक रूप में देखें तो जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में यह

आचरणीय है। चौरासी लाख जीव योनियों में मानव ही सबसे बुद्धिमान प्राणी है। मानव के द्वारा किया गया कोई भी कार्य अहिंसात्मक होना चाहिए। अहिंसा केवल हिंसा न करना ही नहीं है, बल्कि प्राणिमात्र पर दया का भाव है। यदि हम समाज के उन लोगों को देखे जो जंगलों में निवास करते है, आजकल इनकी प्रवृत्ति कुछ हिंसात्मक हो गई है। माओ के विचारों से प्रभावित होकर इन्होंने माओवाद को अपना लिया है। कुछ विचारक माओवादियों के विरोध को उकने हक के लिए ठीक कहते है, किन्तु यदि हम गांधीवादी दृष्टि से देखें तो यह ठीक नहीं है। गांधीजी का मानना था कि साध्य और साधन दोनों अच्छे होने चाहिए। विरोध को विरोध से नहीं समाप्त किया जा सकता, विरोध को शान्ति से समाप्त करना चाहिए।